इकाई 9 कृषक वर्ग*

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्योग की अवधारणा

9.3 उद्योग और इसके प्रकार

9.4 भारत में उद्योगों का विकास

- 9.4.1 प्राचीन उद्योग
- 9.4.2 मध्यकालीन उद्योग
- 9.4.3 आधुनिक उद्योग
  - 9.4.3.1 ब्रिटिश काल के दौरान आधुनिक उद्योगों का परिचय
  - 9.4.3.2 आजादी के बाद के उद्योग
  - 9.4.3.3 पोस्ट उदारीकरण उद्योग

9.5 औद्योगिक नीतियों के विभिन्न परिणाम

9.6 श्रम शक्ति की प्रकृति

- 9.6.1 औपचारिक और अनौपचारिक रोजगार
- 9.6.2 भारत में व्यापार संघों की उत्पत्ति
- 9.6.3 श्रम कल्याण और कानून

9.7 सारांश

9.8 संदर्भ

9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई से गुजरने के बाद, आप समझने में सक्षम होंगे –

- उद्योग और इसके प्रकारों की अवधारणा।
- भारत में उद्योगों का उद्विकास।
- श्रम शक्ति की प्रकृति, और इसके प्रकार
- भारत में ट्रेड यूनियन और अंत में
- श्रम कल्याण के उपाय और विधान।

9.1 प्रस्तावना

आपने भारत में विभिन्न कृषि वर्गों और इकाई 08 कृषि वर्गों में उनकी विशेषताओं के बारे में सीखा। यहाँ इस इकाई में हम आपको विभिन्न प्रकार के उद्योग की अवधारणा के बारे में समझाएंगे। जब हम भारत में विभिन्न उद्योगों के बारे में बात करते हैं, तो हम इसके

*डॉ कुसुमलता, सी.सी.एम.जी (CCMG), जे.एम.आई / अनु.श्री एम.पी कंवल

ऐतिहासिक विकास पर भी ध्यान केंद्रित करते हैं। औपनिवेशिक काल में विभिन्न प्रकार के औजारों और तकनीकी विकास ने आधुनिक उद्योगों को विकसित करने में कैसे मदद की। अंग्रेज भारत में अपनी तकनीक लाए जैसे, रेलवे, पोस्ट और टेलीग्राफ आदि। हमने भारत में श्रम शक्ति की प्रकृति के बारे में बताया है। शुरू में फैक्ट्री के अधिकांश मजदूर, मिल मजदूर पड़ोस के जिलों और क्षेत्रों से कैसे आए। बाद में उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, और इसी तरह के दूरदराज के क्षेत्रों से लोगों के फैलने के कारण विभिन्न राज्यों और ध या उन क्षेत्रों में पलायन शुरू हो गया जहाँ इन कारखानों/उद्योगों को अधिक श्रम शक्ति की आवश्यकता थी। हमने कपड़ा मिलों आदि का उदाहरण दिया है और फिर भारत में ट्रेड यूनियनों की उत्पत्ति कैसे हुई है इस बारे में बताया गया है । अंत में, हमने श्रम कल्याण उपायों और विधानों के बारे में बात की है।

9.2 उद्योग की अवधारणा

उद्योग को उच्च स्तर के स्वचालन और विशेषज्ञता के साथ अच्छी तरह से संगठित कारखानों में माल के सामूहिक रूप से बड़े पैमाने पर विनिर्माण के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। हालाँकि, यह उद्योग की एक सामान्य अवधारणा है, लेकिन इसमें अन्य व्यावसायिक गतिविधियाँ भी शामिल हो सकती हैं जो कृषि, परिवहन, आतिथ्य और इसी तरह की अन्य सेवाएँ प्रदान करती हैं। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 किसी भी व्यवसाय, व्यापार, उपक्रम, निर्माण या

पेशा (अंग्रेजी में कॉलिंग या ऑकुपेशन (Occupation)) के रूप में ''उद्योग'' को परिभाषित करता है, जिसका अर्थ है किसी व्यक्ति की नौकरी या व्यवसाय, जैसे कि, किसी शिक्षक या चिकित्सक की नियुक्ति, कोई सेवा, सेवा , रोजगार, हस्तकला या औद्योगिक व्यवसाय या काम करने वाले लोगों का व्यवसाय आदि ।

एक उद्योग केवल तभी मौजूद होता है जब नियोक्ताओं (employee) और कर्मचारियों के बीच संबंध होता है, पूर्व व्यवसाय, व्यापार, उपक्रम, नियोक्ताओं की विनिर्माण व्यवसाय में लगा होता है, जबकि बाद वाला अर्थात कर्मचारी पेशा , सेवा, रोजगार, हस्तकला या औद्योगिक व्यवसाय में श्रमिकों के रूप में लगे होते हैं।

9.3 उद्योग और इसके प्रकार

जब हम उद्योगों की प्रकृति और अवधारणा पर चर्चा करते हैं तो हम आम तौर पर विभिन्न प्रकार के उद्योगों के बारे में चर्चा करते हैं। यहां हम आपको उद्योग के कुछ प्रकारों का विवरण देंगे

1) **प्राथमिक उद्योग**

प्राथमिक उद्योगों द्वारा हम उन लोगों का उल्लेख कर रहे हैं जो जमीन या समुद्र से कच्चे माल (जो प्राकृतिक उत्पाद हैं) निकालते हैं। तेल, लौह अयस्क, लकड़ी, मछली, खनन, उत्खनन, मछली पकड़ने, वानिकी और खेती आदि ये सभी प्राथमिक उद्योगों के उदाहरण हैं।

2) **द्वितीयक उद्योग** (कभी-कभी विनिर्माण उद्योग के रूप में संदर्भित)

इन उद्योगों में शारीरिक श्रम या मशीनों द्वारा कच्चे माल का निर्माण, साबुन, वस्त्र, खिलौने आदि जैसे उत्पादों का निर्माण शामिल है।

द्वितीयक उद्योग अक्सर कार कारखाने की तरह असेंबली लाइन उत्पादन का उपयोग करते हैं। यहां अमेरिका में फोर्ड कार कंपनियों द्वारा कारों के उत्पादन के लिए सबसे पहले शुरू की गई कन्वेयर बेल्ट प्रणाली एक अच्छा उदाहरण है। इससे एक ओर औद्योगिक श्रमिक का अलगाव होता है, लेकिन दूसरी ओर पूंजीवादी मालिकों को बढ़ावा मिलता है। इस तरह के औद्योगिक उत्पादन को नए औद्योगिक समाज के उद्‌भव के रूप में देखा जा सकता है।

3) **तृतीयक उद्योग** (कभी-कभी सेवा उद्योग के रूप में संदर्भित)

ये उद्योग न तो कच्चे माल का उत्पादन करते हैं और न ही कोई उत्पाद बनाते हैं।

इसके बजाय वे लोगों और उद्योगों को सेवाएं प्रदान करते हैं।

तृतीयक उद्योगों में डॉक्टर, दंत चिकित्सक, बैंक आदि जैसी सेवाएं शामिल हो सकती हैं।

4) **चतुर्थक उद्योग**

ये उद्योग उच्च तकनीकी उद्योगों के उपयोग को शामिल करते हैं।

जो लोग इन कंपनियों के लिए काम करते हैं, वे अक्सर अपने कार्यक्षेत्र में अत्यधिक योग्य होते हैं।

अनुसंधान और विकास कंपनियां इस क्षेत्र में सबसे आम प्रकार के व्यवसाय हैं।

5) **पंचम (क्विनरी) उद्योग**

इन उद्योगों में वे शामिल हैं जो औद्योगिक और सरकारी निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को नियंत्रित करते हैं।

इन उद्योगों में उद्योग के अधिकारी, प्रबंधन, नौकरशाह और सरकार में निर्वाचित अधिकारी शामिल हैं। इस स्तर पर नीतियां और कानून बनाए और लागू किए जाते हैं।

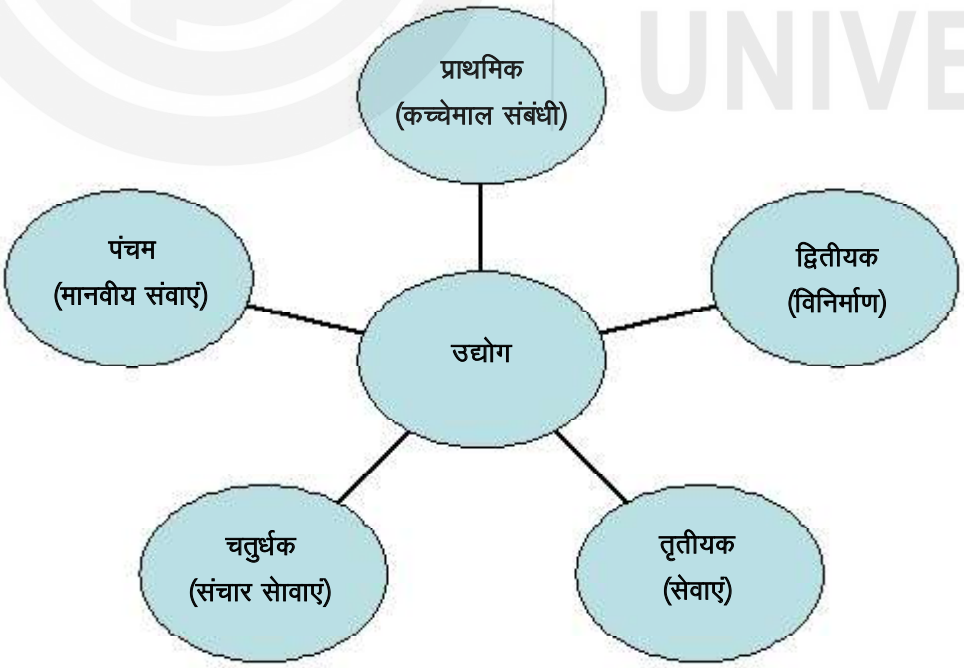

चित्र : उद्योग के प्रकार

9.4 भारत में उद्योगों का उद्विकास

भारत में औद्योगिक विकास के इतिहास को तीन अवधियों के माध्यम से रेखांकित किया जा सकता हैः प्राचीन उद्योग, मध्यकालीन उद्योग और आधुनिक उद्योग।

9.4.1 प्राचीन उद्योग

प्राचीन या आदिम काल में उद्योग को उन कार्यों को शामिल करने के लिए समझा जा सकता है जो मानव द्वारा किए गए थे, जब वे जंगलों या रेगिस्तानों में जीवन जीने के लिए बहुत ही सरल उपकरणों और विधियों पर निर्भर थे। इस अवधि में कोई व्यवस्थित उद्योग विकसित नहीं हुआ था। इस प्रकार इन दिनों के दौरान लोगों की मुख्य चिंता भोजन और शारीरिक सुरक्षा हासिल करने की थी। वे साधन, जो इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए उनके द्वारा अपनाया गया था, उनके औद्योगिक प्रयास का प्रतीक थे। भोजन के लिए आदिम लोग जानवरों का शिकार करते थे और जंगली सब्जियां और फल इकट्ठा करते थे। शिकार के लिए उसने धनुष और तीर और पत्थर से बने कुछ उपकरण लगाए। सभी आदिम हथियार लकड़ी या पत्थर के बने होते थे। ये हथियार उस काल के औद्योगिक विकास के प्रतीक थे। इसके अलावा, पत्थर या बांस के घर्षण से आग बनाना उस युग का औद्योगिक चमत्कार था। यहां हम उन आदिम लोगों की बात कर रहे हैं जो प्राचीन काल में गुफाओं और जंगलों में रहते थे।

9.4.2 मध्यकालीन उद्योग

मध्यकाल के दौरान उद्योग का पर्याप्त विकास हुआ था। इस अवधि में मनुष्यों के प्रयासों में उद्योग के संकेत काफी दिखाई देने लगे। रूप रूप से संचालित मशीनों की एक संख्या गढ़ी गई थी। मनुष्य ने भी अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए पशु शक्ति का उपयोग करना शुरू कर दिया। औद्योगिकीकरण के संकेत, खपत से अधिक वस्तुओं का उत्पादन यानी अधिशेष खाद्यान्न और अन्य उत्पाद शुरू हुए और इनका संग्रहण इस समय में साक्ष्य के रूप में आया। वस्तुओं का आदान-प्रदान और श्रम विभाजन भी प्रचलन में आया। इसके परिणामस्वरूप, विभिन्न उद्योगों ने अलग-अलग काम करना शुरू कर दिया। उदाहरण के लिए, लोहार, बढ़ई और बुनकरों ने स्वतंत्र इकाइयाँ स्थापित किया । इस प्रकार, नौकरियों की विशेषज्ञता शुरू हुई। कारीगरों की कलात्मक भावना जागृत हुई। पश्चिम में मध्यकालीन औद्योगिक युग को तीन अलग-अलग औद्योगिक प्रणालियों में विभाजित किया जा सकता है। यह विभाजन औद्योगिक प्रणाली की प्रकृति पर आधारित था। ये औद्योगिक प्रणाली सामंती प्रणाली, गिल्ड प्रणाली और घरेलू प्रणाली हैं।

9.4.3 आधुनिक उद्योग

भारत में आधुनिक उद्योग का उद्भव आम तौर पर 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से जुड़ा हुआ है, जब उद्योग में व्यापारी पूंजी का चलन तीव्र गति से बढ़ा । 19 वीं शताब्दी के अंत में, एक भारतीय व्यवसायी के पास आधुनिक उद्योगों का एक परिसर था, जो पश्चिमी भारत में फैला हुआ था। बंबई और अहमदाबाद की कपास मिलें इसके उदाहरण हैं। दो विश्व युद्धों के बीच आधुनिक उद्योग द्वारा बाद में लगभग आधी सदी के बाद इस विकास का अनुसरण किया गया। यह भारत में आधुनिक औद्योगिक विकास की शुरुआत है। औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से औद्योगिक और विनिर्माण क्षमता में सुधार किया जाता है और साल दर साल उन्नत प्रौद्योगिकियों के साथ उन्नत होता जाता है और यह किसी अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार बन जाता है।

इतिहासकारों ने औद्योगिकीकरण और औद्योगिक क्रांति को इतिहास के आधुनिक काल की शुरुआत के रूप में देखा है, जो क्रांति और उत्पादन के पूंजीवादी मोड की परिपक्वता के साथ संबद्ध है। परंपरागत रूप से इतिहासकारों ने इंग्लैंड को दुनिया की पहली कार्यषाला के रूप में देखा है जहां कई स्थितियों में पूंजीवादी उद्यम के विकास की सुविधा मिली जो एक भरोसेमंद घरेलू बाजार और एक विदेशी विस्तार पर निर्भर हो सकता था । कृषि में पूंजीवादी संबंधों के उद्भव, व्यापार के विस्तार और प्रौद्योगिकी के विकास और उद्योग और नवाचार के लिए पूंजी की आवाजाही का मतलब था कि 18 वीं शताब्दी के अंत तक इंग्लैंड पहली औद्योगिक क्रांति का अनुभव कर रहा था। इसी अवधि में भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन का उदय हुआ, जहां 18 वीं शताब्दी के अंत तक, औपनिवेशिक शासकों द्वारा अधीनता के संबंध में दो अर्थव्यवस्थाओं को बांधने के लिए विकास की एक श्रृंखला शुरू हुई थी और खुद के उद्योग के लिए भारत के धन का दोहन करने के लिए उनका शोषण होने लगा। भारत अशहरीकरण और अपनी स्वयं की संपन्न कला, वाणिज्य, हस्तकला आदि के विनाष की प्रक्रिया से गुजरा और जब बड़े पैमाने पर पलायन गाँवों की तरफ हुआ तो इसके कारण कृषि क्षेत्र पर अधिक बोझ बढ़ गया।

आमतौर पर दो प्रकार के औद्योगीकरण होते हैं, एक बड़े पैमाने पर आधारित उद्योग है जो श्रम उत्पादकता में तेजी से वृद्धि करने में सक्षम है, और इसलिए औसत आय उत्पन्न करते हैं। यह पूंजी गहन प्रौद्योगिकी और संसाधनों के कुशल संगठन के माध्यम से ऐसा करता है। दूसरी ओर लघु उद्योग एक अन्य प्रकार का उद्योग विकसित हुआ लेकिन अधिक श्रम गहन होने के कारण इसमें समान स्तर के रोजगार उत्पन्न करने की क्षमता नहीं थी। भारत में स्वतंत्रता के बाद बड़े पैमाने पर औद्योगिक विकास हुआ, लेकिन केवल एक सीमित तरीके से इसका विकास हुआ और इसके लिए औपनिवेशिक नीतियों के प्रभाव और सस्ते श्रम की उपलब्धता का संयोजन और तुलनात्मक रूप से पूंजी की लागत और की कमी थी।

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें

1) लगभग 5 लाइनों में उद्योग की अवधारणा को परिभाषित और चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) उन उद्योगों के प्रकारों की सूची बनाएं जिनके बारे में आपने सीखा है।

.....

.....

.....

.....

.....

9.4.3.1 ब्रिटिश काल के दौरान आधुनिक उद्योगों का परिचय

भारतीय व्यापार की दीर्घकालिक गिरावट और 1830 और 40 में भारतीय अर्थव्यवस्था में मन्दी (यानी कीमतों में गिरावट) और साथ ही सस्ते वस्त्रों के ब्रिटिश आयातों द्वारा इसके प्रतिस्थापन को ''विऔद्योगीकरण'' की अवधि के प्रारम्भ रूप में देखा गया है, इसका मतलब था कि स्थानीय या घरेलू कारीगर (हस्तकला व्यवसाय) उद्योगों में गिरावट। ''विऔद्योगीकरण (डी-इंडस्ट्रियलाइजेशन)एक विवादास्पद बहस रही है या नहीं, इसका विवरण यहां ध्यान केंद्रित करना नहीं है। हालाँकि, हमारे पास रोजगार के जो सबूत हैं, उनसे पता लगता है कि 19वीं और 20वीं शताब्दी में आधुनिक उद्योग के उद्‌भव से कारीगरों के उद्योगों में गिरावट नहीं आई।

कारखानों को श्रमिकों की जरूरत थी। कारखानों के विस्तार के साथ, यह मांग बढ़ गई। 1901 में, भारतीय कारखानों में 584,000 श्रमिक थे। 1946 तक यह संख्या 2,436, 000 से अधिक थी। श्रमिक कहां से आए थे? अधिकांश औद्योगिक क्षेत्रों में श्रमिक क्षेत्रों और इन क्षेत्रों के आसपास के जिलों से आए थे और कारीगरों को, जो गाँव में कोई काम नहीं करते थे, काम की तलाश में औद्योगिक केंद्रों में जाते थे। 1911 में बॉम्बे कॉटन उद्योगों में 50 प्रतिशत से अधिक श्रमिक पड़ोसी जिले रत्नागिरी से आए थे, जबकि कानपुर के मिलों ने अपने टेक्सटाइल के अधिकांश हिस्से कानपुर जिले के गाँवों से प्राप्त किए थे। फसल और त्यौहारों के दौरान अपने गाँव के घरों को लौटते हुए, ज्यादातर श्रमिक गाँव और शहर के बीच चले जाते थे । समय के साथ, जैसे ही रोजगार की खबर फैली, श्रमिकों ने मिलों में काम की उम्मीद में बहुत दूरियां तय कीं। उदाहरण के लिए, संयुक्त प्रांत से, वर्तमान में उत्तर प्रदेश से, वे बंबई की कपड़ा मिलों और कलकत्ता की जूट मिलों में काम करने गए थे। नौकरी मिलना हमेशा मुश्किल था, यहां तक कि जब मिलें कई गुना बढ़ गयी और श्रमिकों की मांग बढ़ गई तब भी काम मांगने वालों की संख्या हमेशा उपलब्ध नौकरियों से अधिक थी ।

9.4.3.2 स्वतंत्रता के बाद उद्योग

1953 में समाप्त होने वाले पांच वर्षों की अवधि में पारंपरिक उद्योगों के बाद की निर्भरता अवधि के उदाहरणों में लगभग 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई, लेकिन आधुनिक उद्योगों जैसे मोटर, डीजल इंजन, बैटरी, ट्रांसफार्मर, रेडियो और विभिन्न अन्य वस्तुओं और सेवाओं का निर्माण में इसी अवधि में 100 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई । तब से, अन्य क्षमता और उत्पादन आनुपातिक गति से बढ़ रहे हैं। इस अवधि के दौरान औद्योगिक वित्त निगम और राज्य वित्त निगम जैसी कई संस्थाओं और एजेंसियों की स्थापना की गई ताकि उद्योग के विकास में मदद की जा सके। आजादी के बाद औद्योगिक क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण नवाचारों में से एक पंचवर्षीय योजनाओं की शुरुआत और 1948 के 'औद्योगिक नीति प्रस्ताव' में व्यक्त की गई जोकि उद्योग में सरकार द्वारा प्रत्यक्ष भागीदारी थी। तब से राष्ट्र अर्थव्यवस्था के विकास में में सार्वजनिक और निजी भागीदारी के मिश्रित स्वरूप अनुसरण कर रहा है।। 1956 में 'नई औद्योगिक नीति प्रस्ताव' प्रकाशित होने पर उद्योग के लिए यह दोहरा दृष्टिकोण अधिक प्रभावी हो गया। इसके अनुसार, उद्योगों को तीन श्रेणियों यानी ए, बी और सी श्रेणियों में बांटा गया था। श्रेणी ए के अंतर्गत उन उद्योगों को शामिल किया जाता है जिन्हें केवल सरकार ही संभाल सकती है।

ए - इनमें से कुछ परमाणु ऊर्जा, विद्युत, लोहा और इस्पात जैसे हैं।

बी - श्रेणी बी में वे उद्योग शामिल हैं जो निजी हाथों में हैं, लेकिन राज्य द्वारा सड़क और

समुद्री परिवहन, मशीन टूल्स, एल्यूमीनियम, प्लास्टिक और उर्वरकों सहित रसायनों, फेरो मिश्र और कुछ प्रकार के खनन पर उत्तरोत्तर रूप से लिया जा सकता है।

सी - सी श्रेणी के अन्तर्गत उद्योग आते हैं जिन्हें निजी क्षेत्र में छोड़ दिया जाता है, जैसे, कृषि, होटल, सौंदर्य मनोरंजन आदि।

9.4.3.3 उदारीकरण–पश्चात उद्योग

मिश्रित अर्थव्यवस्था ने शुरुआती चरण में देश को भारी उद्योगों जैसे स्टील प्लांट्स-भिलाई और राउरकेला को विकसित करने में मदद की थी, और परमाणु ऊर्जा और पेट्रोलियम आदि जिसके लिए निजी क्षेत्र प्रवेश नहीं कर सकता था। इस युग को ष्परमिट राज 'के रूप में भी जाना जाता था क्योंकि इस चरण के दौरान सरकार का औद्योगिक विकास परियोजनाओं पर पूरा नियंत्रण था। कई निजी निकाय/एजेंसियां उचित प्रमाण पत्र या परमिट प्राप्त करने के बाद ही प्रवेश कर सकते हैं। अक्सर, यह कहा जाता है कि किसी कागजात को प्राप्त करने के लिए काला धन का प्रयोग बढ़ा और इससे परियोजनाओं में बिलम्ब हुआ । इस दौरान निजी पहल को हतोत्साहित करने का यह भी एक बड़ा कारण है। यह 1990 के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था में एक नया चरण सरकार द्वारा पेश किया गया जब अर्थव्यवस्था कुछ हद तक उदारीकृत, निजीकृत और वैष्वीकृत हो गई थी। इसे ही एलपीजी (LPG) कहा जाता है । इस चरण के कारण अर्थव्यवस्था भी उदारीकृत हो गई और विदेशी निवेश का प्रवेश अपेक्षाकृत आसान हो गया।

भारत में औद्योगिक नीति को विभिन्न निम्न अवधियों के द्वारा समझया जा सकता है (i) 1991 से पहले के सुधार की अवधि और 1991 के बाद (ii) उत्तर-सुधार की अवधि। 1991 के पूर्व की औद्योगिक नीतियों ने देश में तेजी से औद्योगिक विकास के लिए माहौल बनाया। इसने व्यापक आधारभूत संरचना और बुनियादी उद्योगों को बनाने में मदद की थी। बड़ी संख्या में वस्तुओं पर आत्मनिर्भरता के साथ एक विविध औद्योगिक संरचना हासिल की गई थी। आजादी के समय उपभोक्ता वस्तुओं के उद्योग में औद्योगिक उत्पादन का लगभग आधा हिस्सा था। 1991 में ऐसे उद्योगों का लगभग 20 प्रतिशत ही था। इसके विपरीत पूंजीगत वस्तुओं का उत्पादन कुल औद्योगिक उत्पादन के 4 प्रतिशत से कम था। 1991 में यह 24 प्रतिशत हो गया था। नए उद्योगों की एक बड़ी विविधता में औद्योगिक निवेश हुआ। आधुनिक प्रबंधन तकनीकों की शुरुआत की गई। उद्यमियों का एक नया वर्ग सरकार से समर्थन प्रणाली के साथ आया है, और देश के लगभग सभी हिस्सों में बड़ी संख्या में नए औद्योगिक केंद्र विकसित हुए हैं। वर्षों से, सरकार ने उद्योग द्वारा आवश्यक बुनियादी ढांचे का निर्माण किया है और बिजली, संचार, सड़क आदि की बहुत आवश्यक सुविधाओं को प्रदान करने के लिए बड़े पैमाने पर निवेश किया है। उद्यमिता विकास में मदद करने, उद्योग के लिए वित्त प्रदान करने के लिए अच्छी संख्या में संस्थानों को बढ़ावा दिया गया और उद्योग द्वारा आवश्यक विभिन्न कौशलों के विकास को सुविधाजनक बनाया गया है ।

9.5 औद्योगिक नीतियों के विभिन्न परिणाम

हालाँकि, औद्योगिक नीति के कार्यान्वयन में कमियों का सामना करना पड़ा, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, यह तर्क दिया जाता है कि औद्योगिक लाइसेंसिंग प्रणाली ने अक्षमता को बढ़ावा दिया है और इसका परिणाम उच्च लागत वाली अर्थव्यवस्था है। लाइसेंसिंग को प्राथमिकताओं और लक्ष्यों के अनुसार क्षमताओं के निर्माण को सुनिश्चित करना था।

हालांकि, लाइसेंसिंग अधिकारियों में निहित विवेकाधीन शक्तियों के कारण प्रणाली भ्रष्टाचार और कर की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है। इसने नए उद्यमों के प्रवेश को हतोत्साहित किया और प्रतिस्पर्धा को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है । इसके विपरीत प्रणाली ने बड़े उद्यमों का समर्थन किया और पिछड़े क्षेत्रों के साथ भेदभाव किया। सरकार ने 1970, 1973 और 1980 की औद्योगिक नीति में कई उदारीकरण उपायों की घोषणा की। हालांकि, 1991 के दौरान औद्योगिक नीति में नाटकीय उदारीकरण के प्रयास किए गए थे।

जुलाई 1991 में भारत की नई औद्योगिक नीति की घोषणा उद्देश्यों और प्रमुख विशेषताओं के मामले में अपनी पहले की औद्योगिक नीतियों की तुलना में रूढ़िवादी थी। इसने पहले से किए गए लाभों को संगठित करने और गड़बड़ियों और कमजोरियों को ठीक करने और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा प्राप्त करने के आधार पर आगे के औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने की आवश्यकता पर जोर दिया। (उद्योग मंत्रालय, 1991)। उदारीकृत औद्योगिक नीति का उद्देश्य तेजी से और पर्याप्त आर्थिक विकास है, और वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ सामंजस्यपूर्ण तरीके से एकीकरण करना है। औद्योगिक नीति सुधारों ने औद्योगिक लाइसेंसिंग आवश्यकताओं को कम कर दिया है, निवेश और विस्तार पर प्रतिबंध हटा दिया है, और विदेशी प्रौद्योगिकी और विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (एफडीआई) तक आसान पहुंच की सुविधा प्रदान की है। इसने विभिन्न उद्योगों में सार्वजनिक, निजी भागीदारी या पीपीपी को पेश करने में मदद की, जैसे कि, सरकार अपने दम पर रियलिटी सेक्टर द्वारा आवास और कार्यालय विकास प्रदान नहीं कर सकी। इसलिए, निजी बिल्डर्स ने अपने निवेश के साथ बाजार में प्रवेश किया। रियलिटी सेक्टर या उद्योग लोगों को रोजगार का भारी स्रोत प्रदान करता है, साथ ही साथ बुनियादी ढाँचे की विकास की जरूरतें भी पूरी होती हैं।

9.6 श्रम बल की प्रकृति

वे व्यक्ति जो या तो कार्यरत हैं या रोजगार मांग रहे हैं या काम के लिए उपलब्ध हैं लेकिन उस विसेश अवधि के दौरान बेरोजगार, एक साथ श्रम बल का गठन करते हैं। श्रम बल भागीदारी दर (LFPR) को प्रति 1000 व्यक्तियों पर श्रम बल में व्यक्तियों की संख्या के रूप में परिभाषित किया गया है। कुल मिलाकर, 1991 में श्रम बल 337 मिलियन से बढ़कर 2013 में लगभग 488 मिलियन हो गया। लगभग 22 वर्षों में श्रम बल में 151 मिलियन का विस्तार है। रोजगार का स्तर कमोबेश इसी प्रवृत्ति का पालन करता है जैसा कि श्रम बल द्वारा दिखाया गया है, लेकिन पूरे स्तर में रोजगार स्तर श्रम शक्ति से कम हो गया, जिससे दोनों के बीच एक सुसंगत अंतर पैदा हो गया। दूसरे शब्दों में, अधिक संख्या में लोगों ने अपने पास उपलब्ध रोजगार के रास्ते की तुलना में श्रम बल में प्रवेश किया। 1991 में 337 मिलियन की तुलना में 2013 में भारत में रोजगार 488 मिलियन तक बढ़ गया।

भारत को एक उभरती हुई अर्थव्यवस्था माना जाता है लेकिन देश में रोजगार की स्थिति अभी भी खराब बनी हुई है। कुल मिलाकर, जनसंख्या अनुपात में श्रम-शक्ति (15 वर्ष और उससे अधिक आयु वर्ग में) भारत में 56 प्रतिशत कम है जबकि शेष विश्व के लिए यह लगभग 64 प्रतिशत है। भारत में भागीदारी काफी हद तक कम है क्योंकि महिला श्रम शक्ति की भागीदारी दर लगभग 31 प्रतिशत है जो दुनिया में सबसे कम है और दक्षिण एशिया में दूसरी सबसे कम है।

आज भी कृषि में लगे श्रमिकों का बड़ा अनुपात (लगभग 49 प्रतिशत) सकल घरेलू उत्पाद में 14 प्रतिशत का योगदान देता है। इसके विपरीत, सेवा क्षेत्र जो सकल घरेलू उत्पाद का 58 प्रतिशत योगदान देता है, मुश्किल से 27 प्रतिशत रोजगार पैदा करता है, और रोजगार

में विनिर्माण का हिस्सा (13 प्रतिशत) और सकल घरेलू उत्पाद (16 प्रतिशत) दोनों पूर्व एशियाई और दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों की तुलना में बहुत कम है । इसका कारण भारत में औद्योगिकीकरण के निम्न स्तर और रोजगारहीन विकास के स्तर में निहित है। इसलिए बहुत कम लोग औपचारिक क्षेत्र में रोजगार पाने में सक्षम हैं। विकास का यह असंतुलित स्वरूप तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था का अनुभव नहीं है। इसके अतिरिक्त, श्रमिक बड़े पैमाने पर (लगभग 92 प्रतिशत) रोजगार के अनौपचारिक क्षेत्र में लगे हुए हैं और उनमें से अधिकांश के पास सीमित सामाजिक सुरक्षा के साथ कम आय है। यह संगठित क्षेत्र में श्रमिकों के पर्याप्त अनुपात के लिए भी सही है। आधे से अधिक कर्मचारी स्व-नियोजित हैं, मोटे तौर पर एक गरीब संपत्ति-आधार के साथ। रोजमर्रा के आधार पर रोजगार पाने के इच्छुक लगभग 30 प्रतिशत मजदूर हैं। नियोजित लोगों में से लगभग 18 प्रतिशत नियमित कर्मचारी हैं, और उनमें से 8 प्रतिशत से भी कम लोगों के पास सामाजिक सुरक्षा के साथ पूर्णकालिक रोजगार हैं।

गतिविधि 1

अपने पड़ोस में एक स्थानीय कारखाना या कुटीर उद्योग पर जाएँ। वहां काम करने वाले कुछ अधिकारियों/कर्मचारियों से बात करें और विभिन्न कामकाज या संचालन के बारे में जानकारी प्राप्त करें। इस कारखाने के निर्माण इकाई के रोजगार और संगठनों पर एक पृष्ठ की एक रिपोर्ट लिखें और अपने अध्ययन केंद्र में अन्य छात्रों के साथ तुलना करें।

भारत में अधिकांश श्रमिक अनौपचारिक नौकरियों में हैं जैसे कि, सब्जी विक्रेता, चाय स्टाल मालिक आदि। लेकिन कृषि आधारित उद्योग से बदलाव हुआ है , निर्माण ने हाल के वर्षों में अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक श्रमिकों को शामिल किया है। इनमें से अधिकांश अकुशल मजदूर हैं। जो अधिक गंभीर है, वह यह है कि औपचारिक क्षेत्र में सृजित होने वाली अधिकांश नई नौकरियां वास्तव में अनौपचारिक हैं, क्योंकि श्रमिकों को रोजगार लाभ या सामाजिक सुरक्षा जैसे कि पेंशन या चिकित्सा आदि तक पहुंच नहीं है। इसके अलावा, उल्लेखनीय असमानताएं यानी पुरुषों और महिलाओं की श्रम बल की भागीदारी दर में अंतर लगातार बना हुआ है।

9.6.1 औपचारिक और अनौपचारिक रोजगार

रोजगार संबंधों को समझने के लिए औपचारिक और अनौपचारिक क्षेत्रों के बीच अंतर महत्वपूर्ण है। औपचारिक क्षेत्र में श्रमिक कारखानों और वाणिज्यिक और सेवा प्रतिष्ठानों में लगे हुए हैं और कानूनी विनियमन के दायरे में हैं। इस क्षेत्र के लगभग 70 प्रतिशत श्रमिक सरकारी, अर्ध-सरकारी और सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में कार्यरत हैं। निजी क्षेत्र केवल 29 प्रतिशत श्रम को औपचारिक क्षेत्र में रोजगार प्रदान करता है। औपचारिक क्षेत्र के श्रमिकों के वेतन शहरी अनौपचारिक क्षेत्र में लगे लोगों की तुलना में काफी अधिक हैं। एक अध्ययन से पता चलता है कि एक औपचारिक क्षेत्र के श्रमिक का औसत वेतन अनौपचारिक क्षेत्र में मजदूरी से 4 या 5 गुना अधिक है। इसके अलावा, श्रम कानूनों की एक श्रृंखला, नौकरियों, स्वास्थ्य सुविधाओं और सेवानिवृत्ति लाभों की सुरक्षा प्रदान करती है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) 'अनौपचारिक क्षेत्र को परिभाषित करता है जोकि रोजगार पैदा करने और संबंधित व्यक्तियों को प्राथमिक आय के साथ वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन में लगी इकाइयाँ शामिल हैं। इकाइयां उत्पादन के कारकों के रूप में श्रम और पूंजी के बीच कम या कोई विभाजन नहीं होने के साथ छोटे स्तर पर इकाइयों का संचालन

करती हैं। ऐसे क्षेत्र में, श्रम संबंध ज्यादातर औपचारिक गारंटी के साथ अनुबंध की व्यवस्था के बजाय रोजगार, रिश्तेदारी या व्यक्तिगत और सामाजिक संबंधों की आकस्मिक शर्तों पर आधारित होते हैं। भारत में, असंगठित क्षेत्र में राष्ट्रीय उद्यम आयोग (NCEUS) ने संगठित या औपचारिक और असंगठित या अनौपचारिक रोजगार के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर किया। असंगठित श्रमिकों में असंगठित उद्यमों या घरों में काम करने वाले उद्योग आधारित हैं। उन्हें नियोक्ताओं से सामाजिक सुरक्षा लाभ नहीं मिलता है। वे उदाहरण के लिए नियमित श्रमिक नहीं हैं, चाय-स्टाल के मालिक, 'पान' विक्रेता, गुब्बारे और खिलौने निर्माता आदि।

औपचारिक क्षेत्र में भी ऐसे श्रमिक हैं जो बिना किसी नियमित रोजगार और सामाजिक सुरक्षा लाभ के हैं। ऐसे श्रमिक विनिर्माण, निर्माण और व्यापार (थोक और खुदरा) में अनौपचारिक रोजगार का प्रमुख हिस्सा है। उनके पास लगभग 76 प्रतिशत श्रमिक हैं। अर्थव्यवस्था में लगभग 84.7 प्रतिशत नौकरियां अनौपचारिक क्षेत्र में, सार्वजनिक क्षेत्र में 4. 5 प्रतिशत, निजी कॉर्पोरेट क्षेत्र में 2.5 प्रतिशत और 'औपचारिक' घरेलू क्षेत्र में 8.4 प्रतिशत हैं। 90 प्रतिशत से अधिक महिला कार्यकर्ता अनौपचारिक क्षेत्र में केंद्रित हैं। महिलाओं को अनौपचारिक क्षेत्र में लचीलेपन के कारण घरेलू नौकरों, रसोइयों आदि जैसे घरेलू कार्यों में अधिक प्रतिनिधित्व मिलता है, यह उनके लिए उनकी अन्य जरूरतों और मांगों को देखते हुए लाभकारी होता है। अवैतनिक श्रम। अनौपचारिक क्षेत्र में काम कम पारिश्रमिक है और परिस्थितियाँ संगठित क्षेत्र से निम्न हैं। उनके पास आर्थिक सुरक्षा और कानूनी सुरक्षा का अभाव है। इसलिए श्रमिकों के अधिकारों और सामाजिक सुरक्षा के अभाव के कारण उन श्रमिकों की बहुत अधिक भेदभाव है जो श्रम कानून या ट्रेड यूनियन संगठन की पहुंच से बाहर हैं। विशेष रूप से महिला कार्यकर्ता अपने पुरुष समकक्षों की तुलना में अधिक कमजोर स्थिति में हैं।

9.6.2 भारत में व्यापार संघों की उत्पत्ति

व्यापार संघ बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण, उद्योगों और औद्योगिक समस्याओं की उपज हैं। आधुनिक औद्योगिकीकरण के आगमन के बाद नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच व्यक्तिगत अनुबंध थे (जैसा कि उद्योगों को घरों में और नियोक्ता के औजारों से चलाया जाता था) , इसके अलावा प्राचीन भारत में, साथ ही मध्ययुगीन काल में, गिल्ड्स की प्रणाली थी जो पारंपरिक मानदंडों के अनुसार कला, मूर्तियां, गहने, हस्तशिल्प की संख्या का उत्पादन करती थी। ये गिल्ड बहुत प्रसिद्ध थे (विशेषकर भारत के दक्षिण में)। आधुनिक उद्योगों के रूप में उनके संबंधों को निर्धारित करने के लिए किसी भी मशीनरी की आवश्यकता नहीं थी। लेकिन आधुनिक फैक्टरी प्रणाली के तहत कस्बों और शहरों में भारी मशीनरी और बड़े पैमाने पर औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के कारण व्यक्तिगत संपर्क खो गया, ।

उत्पादन की लागत को कम करने, प्रतिस्पर्धी बाजार की मांग को पूरा करने और अपने लाभ को अधिकतम करने के लिए नियोक्ता या उद्योगपति उत्पादन और परिष्कृत मशीनों से अधिक से अधिक तकनीकी रूप से उन्नत उपकरणों का उपयोग करते हैं। यह प्रक्रिया नियोक्ता, कर्मचारी संबंध को नियंत्रित करने के लिए और अधिक योगदान देती है। इसके साथ ही, इस तरह की प्रगति ने उदासीन श्रमिकों के एक नए वर्ग को जन्म दिया है, यानी जिन श्रमिकों को कार्ल मार्क्स अलग-थलग कहते हैं, उन्हें वस्तु (कमोडिटी) बनाने में कोई व्यक्तिगत संतुष्टि नहीं है क्योंकि वे केवल एक कील या कुल वस्तु का हिस्सा डाल रहे हैं जैसे कि , एक कार या वाशिंग मशीन आदि) जो अपनी आजीविका के लिए अपनी मजदूरी पर निर्भर हैं।

श्रमिकों का व्यापार संघ उनकी रुचि, आजीविका की स्थितियों की रक्षा के लिए श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करता है और जो उन्हें एकीकृत करने के लिए औपचारिक रूप से स्थितियां बनाता है।

मजदूर संघ (ट्रेड यूनियन्स) श्रमिकों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के बीच एक कड़ी बनाती हैं। वे श्रमिकों को अपनी बात सामने रखने के लिए संस्थागत आधार प्रदान करते हैं। वे अपने हितों की रक्षा के लिए विरोध के संगठित तरिके का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे अनुशासित तरीके से मजदूरों के विरोध प्रदर्शन को नियोजित करते हैं। ये संगठित व्यापारों में श्रमिकों की आवश्यक समझौतों और सौदेबाजी की संस्था हैं। यह नियोक्ता के हित में भी है कि संघ की सदस्यता यथासंभव व्यापक होनी चाहिए। वे देश की आर्थिक उन्नति के साथ जुड़े हुए हैं।

भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन प्रथम विश्व युद्ध के अंत के बाद पैदा हुआ था, जब औद्योगिक हड़ताल का प्रकोप था। पहला संघ 1918 में मद्रास में शुरू किया गया था। इसे मद्रास कपड़ा संघ के नाम से जाना जाता था। इसने श्रमिकों की शिकायतों का प्रतिनिधित्व करने में उत्कृष्ट कार्य किया, लेकिन 1921 में नियोक्ताओं के पक्ष में कानून बनाया गया, जिसने मद्रास उच्च न्यायालय से संघ की गतिविधियों पर लगाम लगाने के लिए एक आदेश प्राप्त किया, इस आयोजन ने जनता का ध्यान व्यापार संघ की ओर आकर्षित किया यह वह कानून था जो तब तक देश में मौजूद नहीं था। इस समय में ही (1920) ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस की स्थापना एक केंद्रीय संगठन के रूप में हुई थी। श्रमिकों के संघ को ILO (अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन) से प्रेरणा मिली।

1926 के भारतीय ट्रेड यूनियन अधिनियम ने पंजीकृत ट्रेड यूनियनों को एक कानूनी और कॉर्पोरेट दर्जा दिया और उन्हें व्यापार विवादों के संबंध में कुछ प्रतिरक्षा प्रदान की गयी । अधिनियम पंजीकरण को नियंत्रित करने वाली शर्तों और निर्दिष्ट यूनियनों के अधिकार और विशेषाधिकार को निर्दिष्ट करने का प्रावधान करता है। अधिनियम ने पंजीकृत यूनियनों के धन को व्यापार विवादों के संचालन के लिए और अपने सदस्यों को लाभ के प्रावधान के लिए खर्च करने की अनुमति दी है।

स्वतंत्रता के बाद, देश बढ़ती बेरोजगारी में डूब गया था। उच्च मजदूरी हासिल करने के लिए श्रमिकों को सेवाएं प्रदान करने की उच्च उम्मीदें, राष्ट्रीय सरकार से बेहतर स्थिति और सुविधाएं बिखर गईं। मजदूरों ने पहले जो हासिल किया था, उसे बनाए रखने के लिए भी कठिन संघर्ष करना जरूरी पाया। हमलों की एक श्रृंखला देश में आ गई और इस अवधि के दौरान खोए गए कार्य दिवस जो देस में दर्ज किए थे गए उच्चतम थे। इस अवधि के दौरान चार केंद्रीय संगठनों (नीचे दी गई सूची) की शुरुआत से ट्रेड यूनियन स्तरों में असंगति बढ़ गई थी। स्थानीय स्तर की ट्रेड यूनियन, फर्म-लेवल या इंडस्ट्री-लेवल ट्रेड यूनियन, बड़े संगठनों या यूनियन फेडरेशन से संबद्ध थे। देश में बड़े संघ राष्ट्रीय स्तर पर श्रम का प्रतिनिधित्व करते हैं। उन्हें केंद्रीय व्यापार संघ संगठनों के रूप में जाना जाता है। अपनी स्थिति प्राप्त करने के लिए, एक ट्रेड यूनियन फेडरेशन के पास कम से कम 500,000 श्रमिकों की सत्यापित सदस्यता होनी चाहिए, जो न्यूनतम चार राज्यों और चार उद्योगों (कृषि सहित) में फैले हुए हैं। केंद्रीय व्यापार संघ संगठनों की सूची निम्न है:

1) ऑल इंडिया सेंट्रल काउंसिल ऑफ ट्रेड यूनियंस
2) ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस ऑल इंडिया यूनाइटेड ट्रेड यूनियन सेंटर
3) भारतीय मजदूर संघ

4) भारतीय व्यापार संघों का केंद्र

5) भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस

6) लेबर प्रोग्रेसिव फेडरेशन

7) भारतीय व्यापार संघ का राष्ट्रीय मोर्चा

8) स्वरोजगार महिला संघ

9) ट्रेड यूनियन समन्वय केंद्र

10) यूनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस

गतिविधि 2

भारत के कुछ प्रसिद्ध ट्रेड यूनियन नेताओं पर एक पुस्तक पढ़ें और भारत में श्रम बलों के कल्याण में उनके योगदान पर दो पृष्ठों का एक निबंध लिखें। अपने अध्ययन केंद्र में अन्य छात्रों के साथ अपने निबंध की तुलना करें।

9.6.3 श्रम कल्याण और कानून

श्रम विधान का उद्देश्य दो गुना है (i) औद्योगिक श्रम की सेवा शर्तों में सुधार करके उन्हें जीवन की बुनियादी सुविधाएं प्रदान करके और (ii) औद्योगिक शांति लाने के लिए जो देश की उत्पादक गतिविधि को गति प्रदान कर सके जो इसकी समृद्धि में वृद्धि कर सके।

भारत के संविधान के तहत, श्रम समवर्ती सूची में एक विषय है जहां केंद्र और राज्य सरकारों दोनों को विधान बनाने का अधिकार है। इसके परिणामस्वरूप कई श्रम कानून बन गए हैं, जो श्रम के विभिन्न पहलुओं अर्थात् व्यावसायिक स्वास्थ्य, सुरक्षा, रोजगार, प्रशिक्षुओं के प्रशिक्षण, निर्धारण, समीक्षा और न्यूनतम मजदूरी के संशोधन, मजदूरी के भुगतान के तरीके, मुआवजे के भुगतान के लिए लागू किए गए हैं। ऐसे श्रमिक जिनकी चोटें या मृत्यु हुई थी या विकलांगता, बंधुआ मजदूरी, अनुबंध श्रम, महिला श्रम और बाल श्रम, औद्योगिक विवादों का समाधान और स्थगन, भविष्य निधि जैसे सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान, कर्मचारी राज्य बीमा, ग्रेच्युटी, भुगतान का प्रावधान श्रमिकों के लिए काम की परिस्थितियों को बोनस और विनियमित करना ये श्रम कानून भारत के संविधान के प्रावधानों से उनके मूल, अधिकार और शक्ति को प्राप्त करते हैं। मानव श्रम की गरिमा की प्रासंगिकता और मानव के श्रम की रक्षा और सुरक्षा की आवश्यकता के रूप में मानव को अध्याय-III (अनुच्छेद 16, 19, 23 और 24) और अध्याय IV (अनुच्छेद 39, 41, 42, 42) में निहित किया गया है। भारत के संविधान के 43 , 43। और 54) मौलिक अधिकारों और राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के अनुरूप है। श्रम कानून सुधार एक सतत प्रक्रिया है और सरकार लगातार गतिशील आर्थिक माहौल में श्रमिकों की उभरती जरूरतों के जवाब में नए कानूनों को पेश कर रही है और मौजूदा कानून को संशोधित कर रही है।

श्रम कल्याण एक व्यापक अवधारणा है जो कारखाने के परिसर के भीतर और बाहर एक व्यक्ति या एक समूह के रहने वाले व्यक्ति की स्थिति का कुल पर्यावरण-पारिस्थितिक, आर्थिक और सामाजिक सद्भाव के साथ स्वीकार्य बातचीत में उल्लेख करती है। कर्मचारियों के कल्याण, श्रम कल्याण और कर्मचारी कल्याण जैसी शर्तें आम तौर पर कर्मचारियों को उनके वेतन के अलावा प्रदान की जाने वाली विभिन्न सुविधाओं और लाभों को संबोधित करने के लिए एक दूसरे के विकल्प के रूप में उपयोग की जाती हैं। श्रम कल्याण का पहलू कल्याण के सामाजिक और आर्थिक दोनों पहलुओं का गठन करता है। यह कल्याण और

उत्पादकता के लिए औद्योगिक संबंधों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। राष्ट्रीय श्रम आयोग का कहना है कि "श्रम कल्याण का मॉडल अनिवार्य रूप से गतिशील है। इसकी व्याख्या एक देश से दूसरे देश में आर्थिक विकास और श्रमिक वर्ग के सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण और विकास के संबंध में बदलती है। यह कहा जा सकता है कि श्रम कल्याण सरकारी प्राधिकरणों, नियोक्ताओं, स्वैच्छिक संगठनों और ट्रेड यूनियनों की उन सभी गतिविधियों को दर्शाता है जो श्रम वर्ग को बेहतर सामाजिक परिस्थितियों में अच्छी तरह से जीने और अधिक उत्पादक होने में मदद करते हैं। इसमें श्रम की सामाजिक स्थिति, सुरक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण और औद्योगिक उत्पादकता में सुधार के प्रावधान हैं। आम तौर पर श्रम कल्याण कार्यों को नीचे दिए गए पाँच वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

1) केंद्र सरकार द्वारा लागू विभिन्न कानूनी विधानों द्वारा वैधानिक प्रावधान,

2) राज्य सरकार की एजेंसियों द्वारा दिए गए कल्याणकारी उपाय,

3) नियोक्ताओं द्वारा दिए गए कल्याणकारी उपाय,

4) ट्रेड यूनियनों द्वारा मजबूर कल्याणकारी उपाय, और

5) स्वैच्छिक सामाजिक एजेंसियों द्वारा विभिन्न कल्याणकारी कार्य किए गए।

केंद्र और राज्य सरकारों ने भी कानून बनाए हैं और सामाजिक सुरक्षा और श्रमिकों की विशिष्ट श्रेणियों के कल्याण के लिए स्थापित योजनाएं हैं। सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक सुरक्षा कानून निम्नलिखित हैं:

i) कर्मचारी मुआवजा अधिनियम, 1923,

ii) कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948,

iii) कर्मचारी भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम, 1953 और

iv) मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961,

v) ग्रेच्युटी अधिनियम का भुगतान, 1972।

श्रम कानून सुधारों के हिस्से के रूप में, सरकार ने मजदूरी पर चार श्रम संहिताओं के प्रारूपण के लिए कदम उठाए हैं, औद्योगिक संबंध, सामाजिक सुरक्षा और कल्याण, और मौजूदा 44 केंद्रीय श्रम कानूनों के प्रासंगिक प्रावधानों को सरल, समाहित और तर्कसंगत बनाने के द्वारा क्रमशः सुरक्षा और कार्य की स्थिति।

बॉक्स 9.0

दत्ता सामंत : एक ट्रेड यूनियन लीडर और उनका राजनीतिक कैरियर

दत्ता सामंत महाराष्ट्र के कोंकण तट पर देवबाग में पले-बढ़े, मध्यवर्गीय मराठी पृष्ठभूमि से थे। वह एक योग्य M.B.B.S. जी.एस. सेठ मेडिकल कॉलेज के डॉक्टर थे और के. ई.एम. अस्पताल, मुंबई और घाटकोपर के पंतनगर इलाके में उन्होंने एक सामान्य चिकित्सक के रूप में कार्य किया। उनके रोगियों के संघर्ष ने, जिनमें से अधिकांश बंबई के कपड़ा मिलों में उद्योग के मजदूर थे, उन्हें उनके अधिकारों के लिए लड़ने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने अपने शुरुआती वर्षों में महाराष्ट्र राज्य में मुंबई के एक इलाके घाटकोपर में, काफी समय बिताया। 20 वीं शताब्दी की शुरुआत से, शहर की अर्थव्यवस्था का कारण प्रमुख कपड़ा मिलों की उपस्थिति थी, जो भारत के संपन्न कपड़ा और वस्त्र उद्योग का आधार था। पूरे भारत के सैकड़ों लोगों को मिलों में काम करने के लिए नियुक्त किया गया था। हालांकि वे एक प्रशिक्षित मेडिकल डॉक्टर थे,

सामंत मिल श्रमिकों के बीच ट्रेड यूनियन गतिविधियों में भी सक्रिय थे। वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और इसके संबद्ध भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस में शामिल हो गए। शहर के कार्यकर्ताओं के बीच लोकप्रियता प्राप्त करते हुए, सामंत का नाम डॉक्टर्साहेब के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

1960 और 1970 के दशक में, मुंबई-ठाणे औद्योगिक बेल्ट ने मजदूरों की निष्ठा और राजनीतिक नियंत्रण के लिए कई ट्रेड यूनियनों के साथ प्रतिस्पर्धा करते हुए लगातार मजदूर वर्ग के हड़ताल और विरोध प्रदर्शनों को देखा। इनमें मुख्य रूप से भारतीय व्यापार संघ का केंद्र में जॉर्ज फर्नांडीस शामिल थे। सामंत सबसे प्रमुख INTUC के नेताओं में से एक बन गये , और अपने राजनीतिक विश्वासों और सक्रियता के कारण तेजी से आगे बढ़े। उन्होंने हड़तालों के आयोजन और कंपनियों से पर्याप्त मजदूरी हासिल करने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने कंपनी के आँकड़ों और व्यवसाय की जानकारी को नजरअंदाज कर दिया, और लगातार रियायतों पर समझौता करने से इनकार कर दिया। 1972 के चुनावों में, वह महाराष्ट्र विधानसभा, या कांग्रेस के टिकट पर विधान सभा के लिए चुने गए, और एक विधायक के रूप में कार्य किया। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के कांग्रेस पार्टी से संबंधित होने के बावजूद उन्हें 1975 में भारतीय आपातकाल के कारण एक उग्रवादी संघवादी के रूप में गिरफ्तार किया गया था। 1977 में उनकी रिहाई और जनता पार्टी गठबंधन की विफलता के साथ सामंत की लोकप्रियता बढ़ गई, जिसके साथ कई प्रतिद्वंद्वी यूनियनों को संबद्ध किया गया। इसने राजनीति में श्रमिकों और उनके हितों को रखने के लिए उनकी लोकप्रियता और प्रतिष्ठा को बढ़ाया।

1981 के उत्तरार्ध में, सामंत को मुंबई मिल श्रमिकों के एक बड़े समूह द्वारा बॉम्बे मिलवॉअर्स एसोसिएशन और यूनियनों के बीच एक अनिश्चित संघर्ष में नेतृत्व करने के लिए चुना गया था, इस प्रकार INTUC (आई.एन.टी.यू.सी.) से संबद्ध राष्ट्रीय मजदूर मजदूर संघ को अस्वीकार कर दिया जिसने दशकों से मिल श्रमिकों का प्रतिनिधित्व किया था। सामंत को नेतृत्व करने के लिए मिल श्रमिकों द्वारा अनुरोध किया गया । उन्होंने सुझाव दिया कि वे प्रारंभिक हड़ताल से पहले कार्रवाई के परिणाम की प्रतीक्षा करेंगे । लेकिन कार्यकर्ता बहुत ज्यादा उत्तेजित थे और एक बड़े पैमाने पर हड़ताल चाहते थे। जिसकी शुरुआत में अनुमानित 200,000-300,000 मिल मजदूर बाहर चले गए, जिससे शहर का पूरा उद्योग एक साल के लिए बंद हो गया। सामंत ने मांग की कि वेतन वृद्धि के साथ, सरकार को बॉम्बे औद्योगिक अधिनियम, 1947 को रद्द करना चाहिए और RMMS को शहर उद्योग के एकमात्र आधिकारिक संघ के रूप में मान्यता देनी चाहिए। श्रमिकों के लिए अधिक वेतन और बेहतर परिस्थितियों के लिए संघर्ष करते हुए, सामंत और उनके सहयोगियों ने मुंबई में ट्रेड यूनियन की घटना द्वारा अपनी शक्ति को भुनाने और स्थापित करने की कोशिश की।

बाद का जीवन और हत्या

सामंत को 1984 में भारतीय संसद के निचले सदन, 8वीं लोकसभा के लिए एक स्वतंत्र, कांग्रेस-विरोधी टिकट पर चुना गया था, एक चुनाव जो अन्यथा राजीव गांधी के तहत कांग्रेस द्वारा एकतरफा था। उन्होंने कामगार अघादी संघ, और लाल निशान पार्टी को संगठित किया, जिसने उन्हें साम्यवाद और भारतीय कम्युनिस्ट राजनीतिक दलों के करीब लाया। वे 1990 के दशक में पूरे भारत में ट्रेड यूनियनों और कम्युनिस्ट राजनीति में सक्रिय रहे। अपनी मृत्यु के समय वह संसद के सदस्य नहीं थे। 16 जनवरी 1997 को मुंबई में सामंत की उनके घर के बाहर हत्या कर दी गई थी। (www-wikipedia-com, दिनांक 31-12-2018)

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दी गई जगह का उपयोग करें।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तरों की जांच करें।

1) लगभग 10 लाइनों का उपयोग करके भारत में श्रम बल की प्रकृति का संक्षेप में वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत में ट्रेड यूनियन का उदय कैसे हुआ? चर्चा कर।

.....

.....

.....

.....

.....

3) संगठित क्षेत्र में काम करने वाली श्रम बल की रक्षा के लिए कम से कम दो विधानों का उल्लेख करें।

.....

.....

.....

.....

.....

9.7 सारांश

वर्तमान इकाई उद्योग की अवधारणा और इसके प्रकारों के बारे में बताती है। यह भारत में उद्योगों के विकास और औपनिवेशिक काल से भारत में आधुनिक उद्योगों के उदय का पता लगाती है। स्वतंत्रता के बाद की अवधि में 1991 में उदारीकरण की अवधि तक हुए परिवर्तनों पर भी चर्चा की गई है।

श्रम बल की प्रकृति, औपचारिक और अनौपचारिक रोजगार, अर्थात, अर्थव्यवस्था के संगठित और असंगठित क्षेत्रों का वर्णन किया गया है, व्यापार संघ और श्रम कल्याण उपायों और विधानों को भी तेजी से विकासशील अर्थव्यवस्था के संदर्भ में जांचा गया है। विभिन्न कानूनी उपाय और औद्योगिक श्रमिकों को दी गई संवैधानिक सुरक्षा उनके जीवन को बेहतर बनाने में मदद करते हैं ।

9.8 संदर्भ

बर्मन, जे. (1996), फुटलूस लेबर : वर्किंग इन इंडियास इनफॉर्मल लेबर, नई दिल्ली, इंडिया : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

दावला, एस. सी, (सं।), (1995, अनप्रोटेक्टेड लेबर इन इंडिया ,नई दिल्ली, इंडियाः फ्रेडरिक एबर्ट स्टिफ्टंग।

दत्त, आर. (सं.)। (1997), आर्गनाइज्ड अनऑर्गेनिज्ड लेबर । नई दिल्ली : इंडिया विकास।

गाडगिल, डी. आर. (1982), इंडस्ट्रियल एवोलुशन ऑफ इंडिया ,नई दिल्ली, रूइंडिया ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

होल्मस्ट्रोम, एम. (1986), इंडस्ट्री एंड इनक्वालिटी : द सोशल एंथ्रोपोलॉजी ऑफ इंडियन लेबर , कैम्ब्रिज, यूकेः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

झाबवाला, आर.(2003), ब्रिंगिंग इनफॉर्मल सेक्टर सेंटर स्टेज आर। झबवाला, आर. एम. सुदर्शन और जे. उन्नी (सं.) में, इनफॉर्मल इकोनमी सेंटर स्टेज (पृष्ठ 258-275), नई दिल्ली, भारतरू ऋषि।

लैम्बर्ट, आर. डी. (1963), वर्कर्स, फैक्ट्रीज एंड सोशल चेंज इन इंडिया , प्रिंसटन, एनजेरू प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

मेयर, सी. ए. (1958)लबर प्रॉब्लम इन द इंडस्ट्रीलिजेषन ऑफ इंडिया ,कैम्ब्रिज, यूकेरू कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

मॉरिस, एम. डी. (1965), दॉ एमेर्जेंस ऑफ लेबर फोर्स इन इंडिया : ए स्टडी ऑफ बॉम्बे कॉटन मिल्स, 1854-1947, बर्कले : कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।

मुखर्जी, आर.के. (1945), द इंडियन वर्किंग क्लास। बॉम्बे, भारतरू हिंद किताब।

रामास्वामी, ई. ए, और रामास्वामी, यू. (1981), इंडस्ट्री एंड एण्ड लेबर , नई दिल्ली : इंडिया ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

रेवड़ी, सी. (1958)। हिस्ट्री ऑफ ट्रेड यूनियन मूमेंट इन इंडिया, नई दिल्लीः इंडियाओरिएंट लॉन्गमैन।

शर्मा, बी. आर. (1971), इंडियन इंडस्ट्रियल वर्कर रू इष्यूज इन पर्सपेक्टिव , इंडिया, रू विकास।

9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

उद्योग को अच्छी तरह से संगठित कारखानों में माल के सामूहिक बड़े पैमाने पर विनिर्माण के रूप में परिभाषित किया गया है जिसमें उच्च स्तर की स्वचालन और विशेषज्ञता है। यह एक उद्योग को समझने का एक पहलू है। हालांकि, उद्योग के एक अन्य पहलू में वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन भी शामिल है, जैसे कि, कृषि, सौंदर्य उद्योग, फिल्म उद्योग, आदि। एक उद्योग तब अस्तित्व में आता है जब नियोक्ता और कर्मचारी के बीच संबंध होता है। नियोक्ता व्यवसाय, व्यापार, विनिर्माण में एक व्यवसाय के रूप में लगे होते हैं लेकिन कर्मचारी उत्पादन की प्रक्रिया में अपनी श्रम शक्ति प्रदान करने में लगे होते हैं।

पाँच विभिन्न प्रकार के उद्योग हैं, जैसे -

1) प्राथमिक

2) माध्यमिक

३) तृतीयक सेवा

4) चतुर्थ तथा

5) पंचम (क्विनरी)

बोध प्रश्न 2

i) श्रम शान्ति ऐसे व्यक्तियों का गठन करता है, जो या तो काम कर रहे हैं और/या कार्यरत हैं या रोजगार की मांग रहे हैं या काम के लिए उपलब्ध हैं, लेकिन उस अवधि के दौरान बेरोजगार हैं जब उन्हें संदर्भित किया जाता है या उनकी गिनती की जाती है। श्रम बल भागीदारी दर (LFPR) को प्रति 1000 व्यक्तियों पर श्रम बल में व्यक्तियों की संख्या के रूप में परिभाषित किया गया है। इसलिए, हम अलग-अलग समय में श्रम बल में व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि को देखते हैं। श्रम बल की समग्र वृद्धि भारत में देखी जा सकती है। यह 1991 में लगभग 337 मिलियन से बढ़कर 2013 में लगभग 488 मिलियन हो गया। उद्योग में भारत की रोजगार दर तुलनात्मक रूप से 56 प्रतिशत कम है जो कि भारत में श्रम शक्ति महिलाओं के कारण कम है।

ii) व्यापार संघ बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण, उद्योगों की एकाग्रता और औद्योगिक समस्याओं की उपस्थिति के संदर्भ में उभरा। इससे पहले घर आधारित उद्योग या यहां तक कि पारंपरिक गिल्ड सिस्टम जो भारत में मौजूद थे,उनमें नियोक्ता कर्मचारी के आमने -सामने के संबंध थे । लेकिन जब आधुनिक फैक्ट्री सिस्टम उभरा तो व्यक्तिगत अंतः क्रिया ने काम हो गयी । आज नियोक्ताओं की रुचि लक्ष्य उत्पादन प्राप्त करने में निहित है जबकि श्रमिकों के हितों को अनसुना या दबा दिया जाता है। इस प्रकार, श्रमिकों का व्यापार संघ, कस्बों और शहरों में अपने हितों, आजीविका की स्थिति की रक्षा करने के लिए श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने के लिए उत्पन्न हुआ।

iii) केंद्र सरकार और राज्य सरकार द्वारा लागू किए गए सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक सुरक्षा कानून हैं।

1) नियोक्ता मुआवजा अधिनियम, 1923।

2) नियोक्ता भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम, 1953।